[ISSN : 2348-2605]

अन्तर्राष्ट्रीय हिन्दी एवं सामाजिक विज्ञान शोध पत्रिका

(त्रैमासिक हिन्दी एवं सामाजिक विज्ञान पत्रिका)

www.gejournal.net

E-mail: hindires@gmail.com

अन्तर्राष्ट्रीय हिन्दी एवं सामाजिक विज्ञान
शोध पत्रिका
(त्रैमासिक हिन्दी एवं सामाजिक विज्ञान पत्रिका)

''हिन्दी उपन्यासों में संयुक्त परिवारों का विघटन–सामाजिक पक्ष''

अमनदीप कौर

शोधार्थी

संस्कृति के समस्त स्तरों पर पारिवारिक संगठन का अनिवार्य अस्तित्व रहा है। वृहतर समाज से लघुतर समाज की ओर उन्मुख व्यक्ति ने आणविक परिवार को व्यक्तिगत विकास के लिए अधिक सुविधाजनक पाते हुए परम्परागत परिवारिक मूल्यों में विघटन को जन्म दिया है। परिवार के परम्परागत कार्य एवं स्थिति विषयक परिवर्तन के फलस्वरूप पारिवारिक धारणाओं में क्रान्तिकारी परिवर्तन उपस्थित हुआ हैं। के.एम. कापड़िया के अनुसार –

"हिन्दू परिवार से तात्पर्य संयुक्त परिवार रहा है। संयुक्त परिवार को हिन्दुओं की एक विशेषता माना जाता है"।[1]

आर्थिक विषमताओं एंव व्यक्ति स्वातन्त्र्य की भावना से आज संयुक्त परिवार की नीवें हिली है। औद्योगीकरण के प्रभाव एंव बीसवीं सदी में पश्चिम की व्यक्तिवादी प्रणाली के अनुरूप मनुष्य की स्थिति उसकी आय से निधारित हुई हैं। फलस्वरूप परिवर्तित सामाजिक आर्थिक परिस्थितियों में विघटनोन्मुख संयुक्त परिवार का स्वरूप हिन्दी उपन्यासों में सामाजिक प्रतिमान के रूप में उभरा है।

यशपाल के 'मनुष्य के रूप' में लाला ज्वालाप्रसाद का संयुक्त परिवार अपनी बहुओं के परस्पर झगडों से विघटनोन्मुख होता है। संयुक्त परिवार में पहले जहां कर्ता का स्थान पिता को प्राप्त था किन्तु परिवर्तित विषम आर्थिक परिस्थितियों वश पिता के जीवित रहने पर ही पृथक परिवार बसा लेता है। इस स्थिति को स्पष्ट करते हुए लेखक का वक्तव्य है – ''स्त्रियों के मनमुटाव से भाइयों के हृद्य भी फट गये। पिता के सिर पर रहते ही बंटवारे की बातें होने लगी और इस प्रसंग को लेकर झगड़े होते।''[2]

[1] Marriage and family in India P.245

[2] मनुष्य के रूप पृ. 189

अमृतराय के 'बीज' मे युवा पीढी का समर्थक सत्यवान सोचता है –''दुनिया खामख्वाह संयुक्त परिवार की लाश ढो रही है। संयुक्त परिवार मर गया। इन हालातों में संयुक्त परिवार अब चल नही सकता।''[3] आन्तरिक आत्मीयता, जो संयुक्त परिवार की आधारशिला रही थी, अब उसका अभाव निरन्तर बढ़ता जा रहा है। परिवार का आर्थिक ढांचा परम्परागत परिवारों से सर्वथा भिन्न होता जा रहा है। परिवर्तित जीवन मूल्यों से प्रभावित परिवारिक स्तर पर 'झूठा सच', 'नदी के द्वीप' एंव 'बूंद और समुद्र' में विघटित परिवारों को लक्ष्य किया जा सकता है।

संयुक्त परिवार की टूटती हुई धारणा की ओर इंगित करता हुआ भगवतीचरण वर्मा के 'भूले बिसरे चित्र' का मुंशी शिवलाल इसे प्रगतिशील दृष्टिकोण मानता है – ''अधिकार और शक्ति अपना स्थान बदल रहे हैं। एक जगह से टूट कर दूसरी जगह जा रहे हैं। परिवार की परम्परा टूट रही है।[4] संयुक्त परिवार में नारी पर होने वाले अत्याचारों के विरोध में विद्या अपने पति के साथ अलग होकर नवीन पारिवारिक इकाइयों के प्रतिमान के प्रति लालसा प्रकट करती है।

नेरश मेहता के 'यह पथ बंधु था' में संयुक्त परिवार में दहेज प्रथा की क्रुरता से अभिषप्त गुनी अपमानित और परित्यक्त होती है। मां के पास आकर सटकर फूट पड़ने पर लेखक का वक्तव्य है – ''रोनेवाली आँखों से डर नही लगता बल्कि सहती आँखों के पत्थरपन को देखकर लगता है कि आँखे स्वयं दुख हो गई है।'' [5] समानता के भाव से आगे बढ़ती हुई नारी अपने व्यक्तित्व के प्रति सजग है। इसी से संयुक्त परिवारों की समष्टि भावना का स्थान व्यक्तिवादिता लेती जा रही है।

वैवाहिक सम्बन्धों में भावात्मकता के स्थान पर बौद्धिकता के महत्व ने संयुक्त परिवार के साथ –साथ मूल परिवारों के आधार – स्तम्भो कों भी प्रभावित किया है। 'दो एकान्त' के विवेक और वानीरा का व्यष्टि सत्य को पाने में पारावारिक विघटन का जन्म आधुनिक युग के नए धरातलों में नए मुल्यों की छटपटाहट– अकुलाहट की सशक्त अभिव्यक्ति है।

[3] बीज, पृ. 219
[4] भूले बिसरे चित्र, पृ. 100
[5] यह पथ बंधु था, पृ. 482

'उषा प्रियंवदा' के 'रूकेगी नही ..... राधिका' में उसके पति द्वारा विद्या को जीवन साथी बना लेने पर परिवर्तित परिवार की नवीन मान्यता उसके जीवन में आत्मक्षोभ, विकल– वेदना की छटपटाहट भरते हुए परिवार की नवीन इकाईयों को संजोती है।

संयुक्त परिवार में समाप्त होती हुई सौहार्द– भावना को लक्ष्य करते हुए बालकृष्ण– भटट् का कथन है– ''दिन –दिन परिवार बढ़ता जाता है। उनके भरण –पोषण और विवाह के खर्च का बोझ मनमाना लदता जाता है। होते–होते वह घराना या तो नष्टप्राय हो जाता है या रहा भी तो किसी गिनती में नही।''[6] वर्तमान आर्थिक व्यवस्था में व्यक्ति की स्वावलम्बन की भावना से संयुक्त परिवार को अनावश्यक बुराई के रूप में स्वीकार किया गया है।

'अश्क' के 'गिरती दीवारें' में निम्नमध्यवर्गीय संयुक्त– परिवार का परम्रागत मर्यादा के फेर में पड़कर परस्पर ईर्ष्या–द्वेष की भावना से प्रेरित व्यवहार इस प्रथा की बुराई को उभारता है। कठोर, क्रूर एंव संकीर्ण विचारों वाला शादीराम अपने निठल्ले पुत्र तथा झगडालू पुत्रवधू का भार उठाये रखना तथा परिवार के प्रत्येक सदस्य में परस्पर असन्तोष व द्वेष भाव बने रहना संयुक्त परिवार की निरर्थकता घोषित करता है।

आणविक परिवार की स्थापना से नवीन परिवारिक इकाइयों के प्रतिमान बनाती हुई 'ब्रह्मपुत्र' की रत्ना कहती है– ''वह एक घर चाहती है, अपना घर, पिता का घर नही, पति का घर, जहाँ वह स्वतन्त्रता से रह सके।''[7]

संयुक्त परिवार के प्रति आकर्षण को महज भावुकता से प्रेरित मानकर 'सारा आकाश' में आर्थिक यन्त्रणाओं के मध्य टूटते–घुटते निम्न मध्यवर्ग का निरूपण है। परिवार के आठ– दस सदस्यों का भार वहन करते हुए धीरज का आत्म– बोध करना – ''हमारी जिन्दगी तो सिर्फ इसी काम के लिए बनी है कि बैल की तरह कमायें और इस गड्ढे में डालते रहे।''[8] संयुक्त परिवार के प्रति विक्षोभ की स्थिति दर्षाती है।

'बूंद और समुंद्र' में कल्याणी की लडकी शकुन्तला के भावी पति का संयुक्त परिवार में रहकर भी आणविक परिवार की स्वच्छन्दता का उपभोग पारिवारिक स्तर पर नवीन इकाइयों का प्रतिमान है। कल्याणी का इस सम्बन्ध मे कथन है– ''दामाद देव संयुक्त परिवार में रहते

[6] हिन्दी गद्य के निर्माता पं. बालकृष्ण भटट् पृ. 255 डा. राजेन्द्र कुमार शर्मा
[7] ब्रहमपुत्र पृ. 345
[8] सारा आकाश पृ. 191

हुए भी घर से स्वतन्त्र है। एक घर में रहते हुए अवश्य हैं, एक ही चौके में खाते–पीते हैं, पर भावज को खाने की माहवारी रकम देकर। घर का हिसाब– किताब भाइयों से साफ है और आपस में बन –बनाव भी खूब।''[9]

इसके अतिरिक्त संयुक्त परिवार का बिना किसी कुंठा, अषान्ति एंव वैमनस्य के रहने को 'परती परिकथा' में अभिव्यक्ति मिली है।

आर्थिक रूप से स्वतन्त्र व्यक्ति अपनी इच्छाओं, आकाक्षांओं की पूर्ति में संयुक्त परिवार को बाधा मानते हुए इसे विघटित करता रहा है। संयुक्त परिवार में कमाने वाले सदस्य के स्वतन्त्र होने की प्रवृति को लक्ष्य करते हुए पिता इस स्थिति से त्रस्त होकर कहते हैं– ''अब दुनिया भर के यह छल प्रपंच मेरी तो समझ में नही आते। होगा, जिसे रहना हो तो रहे। नाक भौं सिकोड़कर किसी को रहने की जरूरत नही । जहां सींग समाये वही जाये।''[10]

एक ओर पिता द्वारा परिवार को आगे न चला पाने की अक्षमता एंव दूसरी ओर 'अमृत और विष' की मंझली बहू सरस्वती का व्यक्तित्व संयुक्त परिवार की विषमता में विघटित होता गया है– ''एक सम्मिलित कुटुम्ब सिद्धान्त का महात्म था, आज उससे हमारे समाज के अधिकाधिक व्यक्तियों को घुटन महसूस होती है।''[11]

भावना के स्थान पर बौद्धिकता, व्यापकता के स्थान पर संकोच, आर्थिक स्वातन्त्र्य की भावना, समष्टि के स्थान पर व्यष्टि महत्व, नारी विद्रोह तथा धर्म में अनास्था इत्यादि कारणों ने संयुक्त परिवार के विघटन एंव नवीन इकाइयों के समाज को उजागर किया है। परिवार के स्वरूप में परिवर्तन आने पर भी उसकी स्थिरता में अन्तर को सम्भव न मानते हुए 'सदरलैंड' तथा 'वुडवर्ड' के अनुसार – ''परिवार एक सांस्कृतिक सार्वभौम है, जिसके स्वरूप में अन्तर है, परन्तु मानव की प्रकृति और मानव अनुभव में दृढ़ता से जड़ जमाये हुए है।''[12] पाश्चात्य सभ्यता के प्रभाव से संयुक्त परिवार के स्थान पर आणविक परिवार के मूल्य विकास ने सामाजिक धरातल पर नैतिकता के प्रतिमान उदित किये हैं।

[9] बूंद और समुद्र पृ. 283
[10] यह पथ बंधु था। पृ. 71
[11] अमृत और विष पृ. 228
[12] The family is a cultural universal varying in details of structure but rooted firmly in the nature of man and in human experience. Introductory Sociology P. 627